ISSN: 3107-3557(Online)
The Knowledge Spectrum - An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

हिन्दी के ग्राम एवं नगरांचलिक उपन्यास एक परिदृश्य

Dr. K. M. Trivedi
Associate Professor in Hindi

हिन्दी में आँचलिक उपन्यास की वास्तविक शुरुआत फणीश्वरनाथ 'रेणु' के 'मैला आँचल' से हुई। इसका प्रकाशन सन् १९५४ में हुआ। इसमें अंचल विशेष का समग्र और संश्लिष्ट जीवन पहलीबार नई शैली में अभिव्यक्त हुआ। 'रेणु' से पूर्व आंचलिकता की अभिव्यक्ति कहीं-कहीं थोड़े-बहुत रुप में दिखाई देती है, क्योंकि कोई प्रवृत्ति अकस्मात जन्म नहीं ले लेती। डॉ. प्रतापनारायण टंड़न आँचलिकता का प्रारंभ आचार्य शिवपूजन सहाय के उपन्यास 'देहाती दुनिया' से मानते हैं, जिसका प्रकाशन १९२६ में हुआ हैं, तो डॉ. सत्यपाल चुध की मान्यता है कि इस प्रवृत्ति का प्रारंभ सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' के 'बिल्लेसुर बकरिहा' उपन्यास से माना जाय। इस उपन्यास में अवध प्रान्त के ग्रामीण जीवन वहाँ की सामाजिक मान्यताओं तथा रुढ़ियों की पर्तों से धिरी जिन्दगी का इतिवृत्त है।

डॉ. बदरीदास ने अपने शोध-प्रबंध में आँचलिकता की खोज ओर दूर जाकर की है तथा उन्होंने चार-पाँच दशक पूर्व की रचित कृतियों को आँचलिक करार दिया है। इनकी स्थापनाओं के अनुसार मन्नन द्विवेदी कृत 'रामलल्ला' उपन्यास सर्वश्रेष्ठ उपन्यास है जिसकी रचना १९१४ में हुई। जिसके अन्तर्गत गोरखपुर बाँस-गाँव तहसील के एक गाँव की विभिन्न स्थितियों की कथा रिपोतॉज शैली में प्रस्तुत की गई है। कुछ लोग प्रेमचन्द और वृन्दावनलाल वर्मा के उपन्यासों में भी आँचलिकता पाते हैं।

आज आँचलिक उपन्यास काफी विविधता के साथ विशिष्ट और विभिन्न अँचलों की अभिव्यक्तिके कारण मजबूत विधा बन गई है। औपन्यासिक धारा को श्रेष्ठता प्रदान करने में आंचलिक धारा काफी कुछ मजबुती के साथ नवीन कथा और शिल्प के साथ प्रस्तुत होती रही है। आँचलिक उपन्यास सिर्फग्रामाँचल तक सीमित न रहते हुए बहोत से ऐसे आंचलिक परिवेश को उभारने में सफल रहा है।

फणीश्वरनाथ 'रेणु' का 'मैला आँचल' उपन्यास आँचलिक उपन्यासों की सृजन यात्रा प्रारम्भ है। इसकी रचना सन् १९५४ में हुई। यह ऐसा विशिष्ट प्रारम्भ हैं जिसने एक तो नयी विधा का नामकरण किया और दूसरा उसी विधा में ऐसी कृति साहित्य को दी जिसने अछूती दुनिया का कोना ही उजागर नहीं किया अपितु नये प्रश्नों, नयी सम्भावनाओं एवं नयी दिशाओं का संधान किया संवेदना और शिल्प के नये आयाम उद्‌घाटित किए। 'मैला आँचल' पूर्णिया जिले के एक गाँव मेरीगंज (जो अत्यधिक पिछड़ा हुआ है) की मैली जिन्दगी का वह दस्तावेज है, जिसमें जीवन के बहु आयामी अन्तर्विरोधी सूत्रों का बेलाग एवं संशिलष्ट वर्णन है। लेखक स्वयं भी कहते है कि "इसमें फूल भी हैं शूभ भी हैं, धूल भी है, गुलाल भी है, कीचड़ भी है, चन्दन भी, सुन्दरता भी है, कुरुपता भी मैं किसी से भी दामन बचाकर निकल नहीं पाया।"[१] लेखकीय वक्तव्य से यह स्पष्ट है कि उसने गाँव को समग्र भाव एवं यथार्थवादी दृष्टि से देखा हैं जिसमें न पूर्वाग्रह है और न दुराग्रह, न वर्गो की हिमायत है और न किसी वर्ग विशेष की काट, समय सन्दर्भ में लक्षित होने वाली सारी मिठास और कड़वाहट को उभरते, नये सम्बन्ध और मूल्य बोध को एक समीपी दृष्टा की भाँति निरखा परखा है।

'रेणु' का दूसरा उपन्यास 'परतीः परिकथा' जिसकी रचना सन् १९५७ में हुई। जिसने बिहार अंचल के ही एक गाँव परानपुर को ही कथा का केन्द्र बनाया। "गाँव समाज में मनुष्य के साथ मनुष्य का संपर्क घनिष्ठ

था। किन्तु अब नहीं रहा। एक आदमी के लिए उसके गाँव का दूसरा आदमी अज्ञातकुलशील छोड़ और कुछ नहीं। कहां है आज का कोई उपयोगी उत्सव अनुष्ठान जहां आदमी एक दूसरे से मुक्त प्राण होकर मिल सके ?मनुष्य के साथ मनुष्य के प्राणों का योग सूत्र नहीं।"[२] गाँव समाज में रहकर भी व्यक्ति अकेलापन अनुभव कर रहा है। नैतिकता निरन्तर टूट रही है। ईमानदारी और सत्य की आवाज हल्की तथा बेईमानी और झूठ की तूती बोलने लगी है।

भौतिकता जीवन की सामूहिकता अविच्छिन्नता को तोड़ घर-परिवारों को तोड़ रही है। संयुक्त परिवार निरन्तर घट रहे हैं और जीवन की सामाजिक ईकाइयों का व्यक्तित्त्व दिन प्रतिदिन खंड़ित हो रहा है। घर-घर की टूटन गाँव को तोड़ है और गाँव टूट-टूटकर शहेरों में समा रहे हैं।

'पानी के प्राचीर' रामदरश मिश्र का पहला उपन्यास है जिसका प्रकाशन सन् १९६१ में हुआ। यह उपन्यास पाण्ड़ेपुर गाँव के माध्यम से स्वतन्त्रता प्राप्ति तक के भारतीय ग्राम की एक विशिष्ट एवं प्रामाणिक गाथा प्रस्तुत करता है। गाँव पांडेपुर के विषय में लेखक कहते हैं कि, 'पानी के प्राचीर' का कथाँचल गोरखपुर जिले में राप्ती और गोरों नदियों की धाराओं से घिरा हुआ एक विशाल भूभाग है, जो युगों से अपनी सारी हरियाली इन नदियों की भूखी धाराओं को लुटाकर केवल विवशता, अभाव और संघर्ष के रुप में शेष रह गया है। संसार के सारे सूत्रों से कटा हुआ यह प्रदेश अपने आप में एक संसार है। यहां न सड़के हैं, न शिक्षण संस्थाएँ, न सुविधापूर्ण ड़ाकखाने है, न सुरक्षा के लिए पुलिस चौकियाँ, न चिकित्सालय हैं, न खेतों के सुधार या विकास के लिए कोई सरकारी या गैरसरकारी व्यवस्था है। यहां है असूज गरीबी, व्यापक अशिक्षा अजगरों की तरह बज खाते, दौड़ते, ऊँचे-नीचे नाले, बीमारी, बेकारी, आपसी फूट और सदियों पुरानी जर्जर नैतिक मान्यताएं।"[३]

"सन् १९६८ में प्रकाशित श्रीलाल शुकल का 'राग दरबारी' उपन्यास सातवें दशक का एक विशिष्ट उपन्यास है जो अपने रुप बन्ध में कथात्मक अनुभवों की अनन्त व्यंग्यात्मक छवियों के माध्यम से नगर से कुछ दूर बसे हुए गाँव शिवपाल गंज की कथा कहते है"।[४] शिवपाल गंज उसका जाना-पहचाना गाँव है जिसकी जिन्दगी आजादी के बाद संक्रमणशील स्थितियों के भँवर में बुरी तरह फंस गई है, प्रगति और विकास के नारों के बावजूद निहित स्वार्थो और अनेक अवांछनीय तत्वों के आघातों के कारण वहां की नैतिकता, सामाजिकता एवं पारसपरिकता बुरी तरह टूटती दृष्टिगत होती है। यह उन्हीं टूटनों का व्यंग्यात्मक दस्तावेज है। राजनीति वहां की जिन्दगी में संक्रामक रोग की तरह नस-नस में व्याप गई है और क्या छोटी क्या बड़ी तरह-तरह की समस्याएँ उसी से फूटती दृष्टिगत होती हैं। लेखक की यथार्थवादी दृष्टि ने इस सत्य का अनावरण अपने नये-पुराने अनुभवों की संश्लिष्ट बुनावट से किया है जिसमें विविध प्रसंग रोजमर्रा की घटनाएँ एवं जानी पहचानी विषम गतिविधियाँ इस तरह परस्पर अनस्यूत हुई है कि कृत्ति को एक नया कथात्मक अन्दाज मिल जाता है। नए कथात्मक अन्दाज में यह राग उद दरबार का है जिसमें हम देश की आजादी के बाद और उसके बावजूद, आहत अपंग की तरह ड़ाल दिए गए हैं या पड़े हुए हैं।

'धरती धन न अपना' जगदीश चन्द्र का प्रथम उपन्यास है। जिसकी रचना का सन् १९७२ है। पंजाब के शिवालिक घाटी में होशियारपुर जिले में स्थित घोड़े-वाहा ग्राम में चमादंड़ी मौहल्ले को केन्द्र में रखकर लेखकने अपने रचना-तंतुओं से दलित वर्ग की मानसिकता को अभिव्यक्ति देने का उपक्रस किया है।

लेखक ने अपने औपन्यासिक वक्तव्य 'मेरी और से' में स्पष्ट किया है कि "आर्थिक अभावों की चक्की में युग-युगान्तरों से पिस रहे हरिजन अब भी मध्यकालीन यातनाओं को भोग रहे है, जिस भूमि पर वे रहते थे, जिस जमीनको वे जोतते थे यहां तक कि जिन छप्परों में वे रहते थे, कुछ भी उनका नहीं था। इन्हीं बातों को देखकर मेरे किशोर मन की वेदना सहसा अपने सभी बाँध तोड़कर फूट निकली और मैंने उपेक्षित हरिजनों के जीवन का चित्रण करने का संकल्प कर लिया । प्रस्तुत उपन्यास लिखने का मूल प्रेरणा-बिन्दु यही है।"[५]

विवेकीराय द्वारा लिखित 'लोकऋण' उपन्यास ग्रामाँचल की सही पहचान करनेवाला उपन्यास है। जिसका प्रकाशन सन् १९७८ में हुआ। उत्तर प्रदेश के गाँव रामपुर की व्यथा-कथा कहनेवाला यह आंचलिक उपन्यास अपनी अनुभव यात्रा में गाँव के प्रति एक नया रुझान, एक नयी मानसिकता उत्पन्न करने की कोशिश कर गाँव की पढ़ी-लिखी पीढ़ी को लोकऋण से मुकन होने की महत्वपूर्ण सलाह देता हैं। इस सलाह के ऐतिहासिक कारण हैं। सातवे दशक तक छपे उपन्यासों में गाँव की विकृतियों और बिगड़ते माहौल को देखकर उपन्यासकारों ने गाँव से निराश हो पलायनवादिता अख्तियार करली थी, और शिवप्रसाद सिंह ने तो अपने उपन्यास 'अलग-अलग वैतरणी' के प्रमुख पात्र जग्गन मिसिर से यहां तक कहलवा दिया कि "यहां रहते वे हैं, जो यहाँ रहना नहीं चाहते पर कहीं जा नहीं पाते। यहाँ से जाते अब वे हैं, जो यहाँ रहना चाहते हैं, पर रह नहीं पाते।"[६]

"मार्कडेय का सन् १९८१ में प्रकाशित 'अग्निबीज' स्वातंत्र्योत्तर ग्रामाँचल का सामाजिक यथार्थ और राजनीतिक चेतना का दिग्दर्शन करानेवाला सशक्त और महत्वपूर्ण उपन्यास है। इसमें उत्तर प्रदेश के रामपुर ग्रामांचल के परिप्रेक्ष्य में स्वातंत्र्योत्तर ग्रामीण जीवन के विभिन्न संदर्भों को परिभाषित किया है।"[७] इसमें परिवर्तित सामाजिक परिवेश, टूटती सामंती व्यवस्था, शोषण की परिवर्तित प्रणाली, आतंक, राजनीतिक पतन, मोहभंग, नई चेतना, अभावग्रस्त जीवन आदि का सूक्ष्मता से अंकन हुआ है। कथा के केन्द्र में गाँधीवादी आश्रम, विभिन्न राजनीतिक विचारधाराएँ और नई पीढ़ी में विकसित हो रही नई चेतना को रखा है। यह मूलतः ग्राम जीवन में उभरते नए अंकुरों की कथा है। इसमें यथार्थ भी है और भविष्य के संकेत भी। चार युवा पात्रों के माध्यम से ग्राम जीवन के विभिन्न संदर्भ, अंतर्विरोध और समाधान को प्रस्तुत किया है। प्रकाशकीय में भी यही संकेत मुखर होता है, "अग्निबीज' स्वतंत्रता के बाद, '५३, '५४ के आस पास के ग्रामीण संदर्भों में उभरते पात्रों की सामाजिक, राजनीतिक चेतना की विकास यात्रा को रेखांकित करनेवाले कथानक का पहला उपन्यास है।"[८]

तिलकराज गोस्वामी का 'चंदनमाटी' (१९८५) उपन्यास पंजाब के ग्रामीण परिवेश का एक संपूर्ण आलेख है। इसके केन्द्र में अमृतसर से चालीस किलोमीटर की दूरी पर अवस्थित ऐतिहासिक नगरी बाबा बकाला के नजदीक व्यास नदी के किनारे बसा राणीपुर ग्राम अँचल है। इसमें पंजाबी माटी से जुड़े जीवन की एक पूर्ण तसवीर सामने रखने का प्रयास दृष्टिगोचर होता है। "वस्तुतः इसे कहानी न कहकर उस गाँव के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन के चित्रों का जीवंत कोलाज कहना अधिक उपयुक्त होगा।" इसमें प्राकृतिक जीवन शैली, रीति-रिवाज, परंपराएँ, बदलते संदर्भ, अंर्तविरोध, सामंती मान्यताएँ, जमीदारों की कुटिलताएँ, पर्वत्यौहार, लोकगीत, लोककला आदि विभिन्न पहलुओं को प्रामाणिकता के साथ प्रस्तुत किया है।[९]

'विकल्प' (१९८८) डॉ. रामदेव शुक्ल का गाँव की बदलती मानसिकता और भावबोध के मूल्यांकन को प्रस्तुत करनेवाला एक महत्वपूर्ण आँचलिक उपन्यास है। यह आयातकाल के पश्चात हुए सता परिवर्तन की बेलाग कहानी है। उत्तरप्रदेश के राजापुर, ड़ोमापुरवा इन पूर्वी अँचल को माध्यम बनाकर लेखक ने गाँव की वास्तविकता, सत्ता परिवर्तन, राजनीतिक विकल्प की स्थिति और गति, समस्याएँ, संघर्ष तथा बदलते मूल्यबोध को ग्रामचेतना के रुप में प्रस्तुत किया है। डॉ. ज्ञानचंद गुप्त के मतानुसार "विकल्प' उनके समाजार्थिक सरोकारों और ग्रामाँचल की सार्थक चिंताओं को अभिव्यक्ति देनेवाला आँचलिक उपन्यास है।"[१०] लेखक ने शिक्षा, बरोजगारी, महंगाई, शोषण, पिछड़ापन, असुरक्षा, गरीबी, भ्रष्टाचार, राजनीतिक पतन, सदोष व्यवस्था, भ्रष्ट नेता आदि विभिन्न संदर्भों को इसमें समेटने का प्रयास किया है।

इनके अलावा ग्रामाँचल पर लिखे गए उपन्यासों में नागार्जुन के 'बलचनमा' (१८५४), बाबा बटेसरनाथ, 'शिवपूजन सहाय का देहाती दुनियाँ' (१९२६), रामदरश मिश्र कृत 'जल टूटता हुआ' (१९६१), विवेकीराय का 'सोनामाटी' (१९८३) आदि उल्लेखनीय हैं।

अमृतलाल नागर द्वारा प्रणीत 'बूंद और समुद्र' उपन्यास का प्रकाशन सन् १९५६ में हुआ। प्रस्तुत उपन्यास का परिवेश मुख्यतः लखनऊ नगर है। इसकी सम्पूर्ण घटनाएँ चौक मुहल्ला से संयुक्त है। लेखक ने स्वयं इस संबंध में अपने विचार व्यक्त करते हुए लिखा है- "उपन्यास के क्षेत्र के रुप में मैंने लखनऊ और उसमें भी खासतौर पर चौक को ही उठाया है। यह इसलिये कि नागरिक सभ्यता की परंपरा देखने में बोली-बानी का रंग घोलने में मुझे सबसे अधिक सुभीता यहीं हो सकता है। जिन गलियों में मेरे उपन्यास की घटनाएँ घटी हैं, वे गलियाँ, हू-ब-हू लगने पर भी लखनऊ के वास्तविक चौक में आपको ढूंढ़े नहीं मिलेगी। एक तरफ जहाँ शहर का असलीपन दरसाने के लिए मैंने यहाँ के अनेक नये-पुराने नागरिको, अखबारों, संस्थाओं और स्थलों के वर्णन किये हैं यही नहीं बल्कि कक्षाक्षेत्र के काल में नगर में होनेवाली बहुत-सी घटनाओं का जिक्र किया है, वहां ही सारा चित्रण कहानी में गुंथ कर बैलोस भी है।"[११]

इस प्रकार प्रस्तुत उपन्यास में लेखकने लखनऊ अँचल को इसका उपजीव्य बनाया है। दृश्य योजना की दृष्टि से प्रस्तुत कृति में हजरतगंज,अमीनाबाद, लालबाग, गोमती-तट तथा चौक आदि स्थलों के चित्र प्रस्तुत किये गये हैं।

मोहन राकेश के 'अँधेरे बन्द कमरे' (१९६१) में छठे दशक की दिल्ली की पृष्ठभूमि में कलाकारों, लेखकों और पत्रकारों की कनाट प्लेस और कॉफीहाउस में गहमागहमी तथा दूतावासों की पोश जिन्दगी के साथ-साथ गरीब और गन्दी कालोनियों की बजबजाती जिन्दगी का भी चित्रण किया गया है। मौजूदा समाज में, विशेषकर भारत के बड़े नगरों में, ऐसे अनेक मनुष्य नामधारी प्राणी हैं जिनकी जिन्दगी आवारा कुतों या कीड़ों-मकोड़ो से बेहतर नहीं। वे अनचाहे बच्चो के रुप में जन्म लेते हैं, लावारिस कुत्तो की तरह पलते हैं और एक दिन भूख, ठंड़ या रोग से मरजाते है;उनकी लाश ठेले या भैंसागाड़ी पर ढोकर किनारे लगा दी जाती है। इस प्रकार टूटते पारिवारिक संबंध, भारतीय जीवन मूल्यों का स्खलन एवं उब पैदा करनेवाली जीवनशैली का अंकन हुआ है।

मनोहर श्याम जोशी के 'कुरु कुरु स्वाहा' (१९८०) में भी मुम्बई के परिवेश में महानगरीय जीवन की विसंगतियों, अनिश्चितताओं, नैतिक मूल्यों तथा वहाँ के रहन-सहन, भौगदौड़, रहस्यमयता, देहव्यापार,

षड्यन्त्र आदि का चित्रण किया गया है। इसके लिए दृश्य और संवाद-प्रधान गप्प बायस्कोप की जो प्रविधि घड़ी गयी है उसमें मनोहर श्याम जोशी गप्पी नरेटर की भूमिका अदा करता है, जब कि मनोहर और जोशी अपने कार्यव्यापारों, वार्तालापों और मस्तिष्क की हरकतों से दृश्य बायस्कोप की रचना करते हैं। इस प्रविधि के द्वारा उपन्यासकार पारस्परिक कथानक, चरित्र-निर्माण, परिवेश रचना आदि को तोड़ने में सफल रहे हैं।

सन् १९६० में ही चित्रा मृद्गल का 'एक जमीन अपनी' नामक उपन्यास प्रकाशित हुआ, जिसका केन्द्रीय कथ्य बम्बई के महानगरीय परिवेश में विज्ञापन-जगत के ग्लैमर, मूल्यहीन प्रतियोगिता, तिकड़म, देह-व्यापार आदि है। इस परिवेश में स्त्री चाई कितनी भी योग्य हो, उसे भोग्य वस्तु के रुप में ही देखा जाता है। पत्नी और प्रेमिका के रुप में आधुनिक स्त्री की स्थिति कितनी त्रासद है, इसका अंकन चित्रा मृद्गल ने गहरी संवेदनशीलता के साथ किया है। 'एक जमीन अपनी' कथानक योजना की द्रष्टि से एक सुघटित और पठनीय रचना है। इसकी भाषा भी कथ्य के अनुरुप, साफ-सुथरी और सर्जनात्मक है, पर फिल्मी ढंग की भावुकता और कथा-योजना इसके प्रभाव को कम करती हैं।

इनके अलावा राजकमल चौधरी का 'शहर था शहर नही था।' (१९६०), गिरिराज किशोर कृत 'चिड़ियाघर' (१९६८), उपेन्द्रनाथ अश्क का 'शहर में घुमता आईना' (१९६२), प्रभा खेतान के 'तालाबन्दी' (१९६१), 'छिन्नमस्ता' (१९६३), 'अपने अपने चहेरे' (१९६४), 'पीली आँधी' (१९६६), प्रियवंद कृत 'परछाई नाच' (२०००), आदि उल्लेखनीय है।

संदर्भसूची :

१. रेणु फणीश्वरनाथ, 'मैलाआंचल', राजकमल प्रकाशन दिल्ली, २०००, भूमिका से
२. रेणु फणीश्वरनाथ, परतीः परिकथा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, २०००, पृ.१८
३. मिश्र रामदरश, पानी के प्राचीर, राजकमल प्रकाशन , दिल्ली, २००३, पृ. ११२
४. डो. त्रिभुवनसिंह, हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, हिन्दी प्रचारक संस्था-वाराणसी, १९६५ , पृ. ४४३
५. जगदीशचंद्र, धरती धन न अपना, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, १९६८, पृ. ६०
६. शिवप्रसाद सिंह, अलग अलग वैतरणी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद,१९६२, पृ. ४०
७. सिंहल डो. शशिभूषण, हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ , भारत प्रकाशन दिल्ली, २००२, पृ. १२०
८. मार्कंडेय, अग्निबीज, लोकभारती इलाहाबाद, १९८१, पृ. २८
९. गौस्वामी तिलकराज, चंदन माटी, विकाल, कानपुर, १९८५, पृ. ६८
१०. साहनी भीष्म, आधुनिक हिन्दी उपन्यास, अभिनव प्रकाशन, दिल्ही, १९८६, पृ. ४०
११. नागर अमृतलाल, बूंद और समुद्र, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली,२००१, पृ. २६